आधुनिक शिक्षा प्रणाली में वैदिक नीतियुक्त शिक्षा की उपादेयता

डॉ. पूनम घई
एसोशिएट प्रोफेसर
आर.एस.एम. (पी.जी.) कॉलेज, धामपुर (बिजनौर)

शोध–पत्र

अश्मन्वती रीयते स ्रमज्वमुत्तिष्ठत प्रतरता सखायः।

अत्रा जहीमोऽशिवा यऽअसंछिवान् वयमुत्तरेमाभिवाजान्।।[1]

मित्रों! जीवन प्राणमय संसाररूपी नदी बह रही है। उसमें बड़े अज्ञानरूपी पत्थर पड़े हैं। उठो! चलो और अच्छी प्रकार से उसको तरने के लिए अर्थात् सत्य चैतन्य की प्राप्ति के लिए अशुभ सङ्.कल्पों एवं आचरणों को छोड़कर शिवसङ्.कल्पों का एवं शुभ आचरणों का आश्रय लो।

वेद इस प्रकार के प्रेरणाप्रद मन्त्रों का महान सागर है। इनसे जीवन में महान प्रकाश एवं सहारा प्राप्त होता है। जीवन के पथ में जब हम किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर अपने को निराश्रित पाते हैं, उस क्षण वेद के इन मन्त्रों से निराशा की घनघोर घटा में विद्युत का स्फुरण होकर आशा का संचार हो जाता है और जीवन पथ का दर्शन होकर हम जड़त्व से चैतन्य की ओर अग्रसर होते हैं। इस प्रकार वैदिक वाङ्.मय में सम्पूर्ण मानव जाति के उद्धार के लिए अनेक दिशा–निर्देश प्रकाशित हैं। इनके अनुसार मनुष्य परमपिता परमेश्वर की सर्वोत्तम कृति है तथा मनुष्य का भी कर्तव्य है कि वह अपनी ओर से मानव सेवा का हर सम्भव प्रयास करे। ईश्वर के प्रति धन्यवाद प्रेषित करने का यही सर्वश्रेष्ठ वेदोक्त मार्ग है। वेदों के अनुसार 'परार्थ' जीवन ही अन्तःकरण की दूषित भावनाओं को शुद्ध कर सकता है।

वर्तमान समय में आपराधिक प्रवृत्तियों का द्रुतगति से बढ़ना, आर्थिक व सामाजिक अपराधों का आधिक्य विश्व अथवा राष्ट्र के विकास का ही नहीं अपितु पतन का द्योतक है। आज मानवीय मूल्यों का ह्रास हो रहा है तथा नैतिकता का पतन भी हो रहा है। इस स्थिति से उबरने के लिए वर्तमान शिक्षा प्रणाली को देखने की भी आवश्यकता है क्योंकि मानव जीवन में शिक्षा का अत्यधिक महत्व है। शिक्षा के बिना मनुष्य का मनुष्यत्व ही सिद्ध नहीं हो सकता। हम यह भी कह सकते हैं कि शिक्षा के बिना मानव पशु समान है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में भौतिकता का विकास अपने चरमोत्कर्ष पर है। वैज्ञानिकता के इस युग में शिक्षा का सोद्देश्य होना अत्यावश्यक है क्योंकि यदि वर्तमान शिक्षा प्रणाली से मानव का कल्याण सम्भव हो पाता तो समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, अशान्ति, चोरी–डकैती, हिंसा, आतंकवाद इत्यादि का प्रचार–प्रसार न हो रहा होता। इसलिए आवश्यकता है

कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली में वैदिक शिक्षा के समावेश की क्योंकि वेदों में मूल्याधारित शिक्षा के सर्वाधिक सन्दर्भ प्राप्त होते हैं।

वैदिक शिक्षा का उद्देश्य मानव में अन्तःशक्ति को समुचित रूप से जागृत करना था। वेद में विशुद्ध मानववाद का दिव्य सन्देश है। वेद में मनुष्य के सच्चे विकास के लिए, उसके आत्मिक बल के लिए, बहुत उदात्त नीतिशास्त्र का संकलन है। वेद परमपिता परमेश्वर को सब प्राणियों का पिता घोषित कर प्राणिमात्र के प्रति समदृष्टि की भावना उत्पन्न करता है। वेद का उद्घोष है कि 'ये सब मनुष्य भाई है। इनमें कोई जन्म से बड़ा नहीं है, छोटा नहीं है – इस समानता के भाव को धारण करते हुए सब ऐश्वर्य या उन्नति के लिए मिलकर प्रयत्न करें –

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते संभ्रातरो वावृधुः सौभगाय।[2]

वेद में उद्घोषपूर्वक कहा गया है कि मैं, मनुष्यों समेत सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखूं। हम सब परस्पर मित्र की दृष्टि से देखें –

''............ मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।[3]

'सत्यं वद, धर्मं चर, स्वाध्यायान्या प्रमदः' यह भारतीय संस्कृति का सार है। इसमें सत्य को धर्म से भी पहले स्थान दिया गया है। हम सदैव सत्य आचरण ही करें। भीतर और बाहर की एकता, जिसे सत्य के नाम से पुकारा जाता है, मनुष्यता का सर्वप्रथम गुण हैं। हम जैसे हैं वैसे ही दूसरों के सामने अपने को प्रकट करें। जो मन में है, वही वाणी से प्रकट करें और वैसे ही कर्म भी करें। 'मनसा वाचा कर्मणां' एकरूप एकरस ही रहें।'

सुगः पन्था अनृक्षर आदित्यास ऋतं यते।
नात्रावखादो अस्ति वः।।[4]

परोपकार और परमार्थ के कार्यों में निन्दा लांछन, उपहास आदि का भय नहीं करना चाहिए। परोपकार का अर्थ है दूसरों की भलाई करें। मनुष्य जीवन की सार्थकता इसी में है कि वह दूसरों के काम आए , यदि वह शक्ति होते हुए भी दूसरों की सहायता नहीं करता तो वह पशु समान ही है –

ये पायवो मामतेयं ते अग्ने
पश्यन्तो अन्धं दुरितादरक्षन्।
ररक्ष तान्त्सुकृतो विश्ववेदा
दिप्सन्त इद्रिपवो नाह देभुः।।[5]

हमें अपने व्यक्तिगत जीवन में और पारिवारिक तथा सामाजिक जीवन में भी हर कार्य नियम से करने की आदत डालनी चाहिए। अपने आहार, विहार, व्यायाम, पूजा–पाठ, कार्य–प्यापार सभी को नियमपूर्वक एवं सुव्यवस्थित रीति से करना चाहिए। हे मानवो! सूर्य, चन्द्रमा जिस प्रकार नियमित रूप से अपने निर्धारित पथ पर चलते रहते हैं, उसी प्रकार तुम्हें भी न्याय का मार्ग नहीं छोड़ना चाहिए –

स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता संगमेमहि।।[6]

हमारे मन में राष्ट्र रक्षा के लिए त्याग और बलिदान की भावना रहनी चाहिए। राष्ट्र केवल सीमाओं में बंधे हुए भूमि के टुकड़े को ही नहीं कहते। यह तो पृथ्वी के साथ उस पर निवास करने वाले नागरिकों के शारीरिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक स्तर तथा चरित्र, आचरण, व्यवहार आदि की समग्रता का नाम है। व्यक्तियों के ज्ञानयोग, भक्तियोग और कर्मयोग से उत्पन्न हुई पाप व पुण्य की धाराओं का नाम है। राष्ट्र की उन्नति के लिए आध्यात्मिक, चारित्रिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, औद्योगिक सभी क्षेत्रों में प्रगति अपेक्षित होती है। तभी एक स्वस्थ, सबल, समर्थ राष्ट्र का निर्माण होता है। कभी भारत राष्ट्र भी जगत् गुरु कहलाता था। आज स्थिति उल्टी होती जा रही है। वैज्ञानिक प्रगति से सुख–सुविधाएं जितनी बढ़ रही है, उतना ही मनुष्य आलसी होता जा रहा है, श्रम से जी चुराने लगा है। बिना स्वयं कुछ किए धरे मनुष्य दूसरों की सम्पत्ति पर अपना कब्जा जमाना चाहता है। मनुष्यों द्वारा जो भी पुरुषार्थ किए जा रहे हैं वे सब ऐसे ही पापपूर्ण उद्देश्यों की पूर्ति के लिए होते हैं। फलस्वरूप, चोरी, डकैती, भ्रष्टाचार, जालसाजी, अपहरण आदि समाज में बढ़ते जा रहे हैं। नित नई दुष्प्रवृत्तियां जन्म ले रही हैं। आज आवश्यकता वेदों की नैतिक शिक्षाओं को ग्रहण करने की है ताकि एक सबल, समर्थ राष्ट्र का निर्माण हो सके। अथर्ववेद का उद्घोष है – 'राष्ट्र के निर्माण के लिए हम सब नागरिक कर्मशील और जागरूक हों।'

यां रक्षन्त्यस्व विश्वदानीं
देवा भूमिं पृथिवीमप्रमादम्।
सा नो मधु प्रियं
दुहामथो उक्षतु वर्चसा।।[7]

समाज व परिवार की सर्वतोमुखी प्रगति के लिए यह आवश्यक है कि लोग दूसरों के विचारों को भी महत्व दें, अच्छी बातों को माने और गलत बातों का प्रतिकार करें। आपसी सम्मान एवं सहिष्णुता में ही संगठन की शक्ति निहित है। 'हमारा हृदय, मन और संकल्प एक से हों जिससे हमारा संगठन कभी न बिगड़े।'

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।[8]

संगठन, सहयोग और मैत्री भाव स्वस्थ समाज के आवश्यक अंग हैं। असहिष्णुता से समाज में विश्वासघात, क्रोध, वैमनस्य आदि बुराइयां जन्म लेती हैं और अराजकता का वातावरण बनता हैं। चारों और छल, प्रपंच का भय समाज में बना रहता है जनजीवन असुरक्षित एवं अशान्त हो जाता है। आज सर्वत्र यही दिखाई दे रहा है।

विश्व शान्ति केवल वेद द्वारा ही सम्भव है। वेद की कामना है कि विश्व के सब मनुष्यों में सद्भावना, मैत्री–भावना एवं विश्व–बन्धुत्व का आलोक फैले। उनके आपसी स्नेह–सम्बन्ध सुदृढ़ हों। विज्ञान के वरदानस्वरूप जहां मनुष्य एक दूसरे के बहुत निकट आ गए हैं , वहीं विज्ञान के अभिशाप से संहारक अस्त्र–शस्त्रों के कारण उनके मन में एक दूसरे के प्रति सन्देह और भय भी बहुत है। एकता तभी हो सकती है जब लोगों के मन और विचार एक हों। वेद मन्त्रों में इसी मानसिक एकता पर बल दिया गया है। इसी से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति होती है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में वैदिक मूल्याधारित शिक्षा का समावेश होना अत्यन्त आवश्यक है तभी कल्याण हो सकता है।

किसी भी परिवार का आधार प्रेम और सौहार्द है। वैदिक शिक्षानुसार आदर्श गृहस्थी वह है जिसमें बेटे माता–पिता के आज्ञाकारी हों। माता–पिता बच्चों के हितकारी हों। पति और पत्नी के पारस्परिक सम्बन्ध सुमधुर और सुखदाई हों। ऐसे ही परिवार सदैव फलते–फूलते और सुखी रहते हैं।

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमती वाचं वदतु शन्तिवाम्।।[9]

आज लोगों ने विवाह के उच्च उद्देश्य एवं आदर्श को ही भुला दिया है। विवाह की सफलता का आधार साथी की मनोभूमि, संस्कृति एवं आदर्शवादिता ही है। विवाह का प्रयोजन आध्यात्मिक है और उसी से गृहस्थ जीवन आनन्दमय होता है। तभी परिवार में सुख, शांति, समृद्धि एवं तेजस्विता आती है। गृहस्थाश्रम का मूलाधार स्त्री है। आज के समाज ने स्त्री को अपने मनोरंजन एवं भोग का क्षेत्र बना लिया है। वेदों में नारी के सन्दर्भ में प्रकाश डालने वाली अनेक ऋचाएं मिलती हैं। ऋग्वेद में ऐसे अनेक सूक्त हैं, जिनकी ऋषिकाएं नारियां हैं। नारियां धार्मिक उत्सवों में स्वतन्त्रतापूर्वक भाग लेती थीं। अथर्ववेद में 'सत्येनोत्तभिता भूमिः' कहकर मातृशक्ति को सत्याचरण की अर्थात् धर्म की प्रतीक कहा है। ऋग्वेद में श्रद्धा, प्रेम, भक्ति, सेवा, समानता की प्रतीक नारी को पवित्र, निष्कलंक, आचार के प्रकाश से सुशोभित प्रातःकाल के समान हृदय को

पवित्र करने वाली, लौकिक कुटिलताओं से अनभिज्ञ, निष्पाप, उत्तम यश युक्त, नित्य उत्तम कर्म करने की इच्छा वाली, सकर्मण्य और सत्य व्यवहार करने वाली बताकर प्रशंसित किया है –

''शुचिभ्राजा उबस्ते नवेदा यशस्वतीरपस्युवो न सत्याः''[10]

वैदिक काल में नारी की गार्हस्थिक स्थिति अत्यन्त सुदृढ़ है। वैदिक साहित्य में पत्नी को पति के घर में सर्वोपरि स्थान प्रदान किया है। आज भी आवश्यकता इसी बात की है कि ऐसी शिक्षा स्त्रियों को दी जाए कि उनमें उपर्युक्त गुणों का समावेश हो तथा सदैव स्त्री जाति को सम्मान दिया जाए।

वेदों का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि वस्तुतः भारतीय नीति विषयक मान्यताएं ऋग्वेद काल में ही निश्चित हो गई थीं। वैदिक नैतिकता का निम्नलिखित सन्देश विश्वजनीन मानव–कल्याणकारी सन्देश है – **'विश्वं सत्यं कृणुहि'**[11] हे परमेश्वर! समस्त विश्व को धर्म परायण बना दें' **'सुगा ऋतस्य पन्थाः।**[12] सत्य का मार्ग सुगम होता है। **'श्रद्धे श्रद्धापयेह नः'**[13] 'हे श्रद्धे! हमारे अन्तःकरण में तू स्थापित हो जा, अर्थात श्रद्धा की दृढ़ स्थापना कर।' **'स्वस्ति पन्थामनु चरेम'**[14] 'हम सदा कल्याण के मार्ग पर ही चलें' **'समाना हृदयानि वः'**[15], 'तुम सब के अन्तःकरण एक जैसे (समान) हों' **'समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति'**[16] 'तुम सबों के मन समान विचारों के, अर्थात् एक ही निश्चय के हों, जिससे तुम्हारे सब मनोरथ सिद्ध हों।' **'मोधमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत् स तस्य'**[17] 'सद्ज्ञान से रहित तथा दान की प्रवृत्ति न रखने वाले कृपण व्यक्ति का अन्न और धन का प्राप्त करना व्यर्थ है। यह मैं सच–सच कहता हूँ कि उसका धन(अन्न) धन नहीं, अपितु उसकी प्रत्यक्ष मृत्यु है।' **'स इद् भोजो यो गृहवे ददात्यन्नकामाय चरते कृशाय'**[18] 'घर में आये हुए भूख से व्याकुल एवं क्षीण व्यक्ति को जो अन्न देता है, वहीं दाता सच्चा पुण्यवान् है।'

'माहं राजन्नन्यकृतेन भोजम्'[19] हे इन्द्रदेव! दूसरों के अन्न के सहारे जीने का दुर्धर प्रसंग हम पर न आए।' **'मा गामनागामदितिं वधिष्ट'**[20] हे जनो! निष्पाप और अदिति गोमाता का वध न करो।' **'शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे'**[21] दो पैर वाले मनुष्यादि तथा चार पैर वाले पशु आदि का कल्याण हो' **'यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्'**[22] यह सम्पूर्ण विश्व एक नीड (घोंसले) के समान हो जाए, अर्थात् यह जगत् विश्वबन्धुत्व भाव से परिपूर्ण हो'

आज शिक्षा हमें जिन विविध कार्यों के योग्य बनाती है उनका सम्बन्ध सांसारिक क्षेत्र से ही है। केवल भौतिक क्षेत्र या भौतिकवाद से ही है। भौतिकवाद के नशे में मनुष्य अपने को भी नहीं पहचान रहा है और न अपने अन्दर निहित शक्तियों को पहचान कर उनका विकास कर पाता है। विद्या का क्या प्रयोजन है, यह समस्या वर्तमान शिक्षा–जगत् आज तक घोषित नहीं कर सका। वेद स्पष्ट शब्दों में घोषित करता है – **''विद्ययाऽमृतमश्नुते''**[23]

जीव आविद्यादि के घोर अन्धकार में पड़कर पथभ्रष्ट हो रहा है उसे सन्मार्ग पर लाने के लिए शिक्षा=विद्या की आवश्यकता है। शिक्षा का उद्देश्य अविद्यादि बन्धनों से मुक्ति दिलाने का है। **'सा विद्या या विमुक्तये'**। वस्तुतः **'असतो मा सद्गमय–तमसो मा ज्योतिर्गमय– मृत्योर्मामृतं गमय'** जो इस आदर्श की पूर्ति करे , वह शिक्षा वास्तव में शिक्षा है। क्या वर्तमान शिक्षा–प्रणाली में इस महान आदर्श की पूर्ति की कहीं गन्ध आती है?

आज मानव जाति का मन और प्राण उसके वश में नहीं है। वह दूसरों के सङ्.कल्पों एवं जीवन पर अपना आधिक्य चाहता है। परन्तु उसका स्वयं के मन एवं प्राण पर आधिपत्य नहीं। मन ही वह प्रथम केन्द्र है, जिसे हमें वैदिक नीति युक्त शिक्षाओं के द्वारा संस्कारवान् बनाने की आवश्यकता है। मन की साधना से ही मनुष्य उन्नत होता है तथा एकाग्रता आती है। वाजसनेय संहिता के मन सम्बन्धी प्रस्तुत मन्त्र मनोविज्ञान का सार प्रस्तुत करते हैं। प्रत्येक मन्त्र में मन के शिव संकल्प होने की प्रार्थना के आधार पर इस मन्त्र समूह को 'शिव–संकल्प–सूक्त' नाम से भी अभिहित किया जाता है।[24]

वैदिक दृष्टि से शिक्षित मनुष्य किन्हीं पोशाकों से पहचाना नहीं जा सकता। जो शिक्षा मन को सुसंस्कृत करके सर्वप्राणियों के हित चिन्तन में प्रवृत्त कर तदनुकूल सर्वहितकारी कार्यो में प्रवृत्त करे , वह वास्तव में शिक्षा है। वस्तुतः शिक्षा का प्रश्न आज हमारे सामने एक ज्वलन्त प्रश्न है। क्या हमें शासन के कार्यों की पूर्ति के लिए कर्मचारियों को ही उत्पन्न करना है, या कारखानों के लिए मजदूर वर्ग तैयार करना है या पेट भरने के लिए कुछ भी व्यवसाय को करने वालों को तैयार करना है। उसे यदि रोजी–रोटी मिल गई तो वह अपने जीवन को सफल समझता है। इस रोटी–रोजी वाद ने मनुष्य को शिक्षा के आदर्श से पतित कर दिया है। अनैतिक उपायों से आय को बढ़ाने को वह पाप नहीं समझता, चतुराई एवं बुद्धिमानी समझता है। इसका कारण यही है कि हमारी शिक्षा में आचार, चरित्र, कर्तव्यपरायणता, जीवन का उद्देश्य शुभसंकल्प, ब्रह्मचर्य, तप आदि को किसी प्रकार का स्थान प्राप्त नहीं है। आधुनिक काल में पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली के द्वारा शिक्षार्थियों का न तो शारीरिक तेज विकसित हो रहा है, न ही नैतिक बल। आज महती आवश्यकता है कि हम अपने जीवन में उन महनीय ऋषियों की अन्तःप्रज्ञा एवं तपःपूत जीवन शैली से नैतिक शिक्षा के सूत्र संकेतों को ग्रहण कर वर्तमान में पुनः उनकी प्रतिष्ठा का प्रयास करें। वैदिक शिक्षा से शिक्षित मनुष्य ज्ञानी होने के साथ तपस्वी और सन्तोषी भी होता है। वैदिक शिक्षा से दीक्षित व्यक्ति धार्मिक होता है। वैदिक शिक्षा से दीक्षित मनुष्य में ज्ञान एवं चरित्र का समन्वय दृष्टिगोचर होता है। आदर्श व्यक्तित्व निर्माण के लिए इस वैदिक नीतियुक्त शिक्षा का प्रचलन वर्तमान समय में भी अत्यावश्यक है।

सन्दर्भ–टिप्पणी

1. यजुर्वेद – 35/10
2. ऋग्वेद – 5/60/5
3. यजुर्वेद – 36/18
4. ऋग्वेद – 1/41/4
5. ऋग्वेद – 1/147/3
6. ऋग्वेद – 5/51/15
7. अथर्ववेद – 12/1/7
8. ऋग्वेद – 10/191/4
9. अथर्ववेद –30/30/2
10. ऋग्वेद – 1/79/1
11. ऋग्वेद – 3/30/6
12. ऋग्वेद – 8/31/13
13. ऋग्वेद – 10/151/5
14. ऋग्वेद – 5/51/5
15. ऋग्वेद – 10/191/4
16. ऋग्वेद – 10/191/4
17. ऋग्वेद – 10/117/6
18. ऋग्वेद – 10/117/3
19. ऋग्वेद – 2/28/9
20. ऋग्वेद – 8/101/15
21. यजुर्वेद – 36/8
22. यजुर्वेद – 32/8
23. यजुर्वेद –40/14